ISSN Print: 2394-7500
ISSN Online: 2394-5869
Impact Factor: 5.2
IJAR 2018; 4(5): 406-409
www.allresearchjournal.com
Received: 03-03-2018
Accepted: 04-04-2018

मो० नसीम वारसी
शोधार्थी, विश्वविद्यालय इतिहास विभाग, ल०ना० मिथिला विश्वविद्यालय, दरभंगा, बिहार, भारत

Corresponding Author:
मो० नसीम वारसी
शोधार्थी, विश्वविद्यालय इतिहास विभाग, ल०ना० मिथिला विश्वविद्यालय, दरभंगा, बिहार, भारत

दलित राजनीति का उद्भव और विकास

मो० नसीम वारसी

सारांश
दलित हजारों वर्षो तक अस्पृश्य या अछूत समझी जाने वाली उन तमाम शोषित जातियों के लिए सामूहिक रूप से प्रयुक्त होता है जो हिन्दू धर्म शास्त्र द्वारा हिंदू समाज व्यवस्था में सबसे निचले पायदान पर स्थित है। संवैधानिक भाषा में इन्हें अनुसूचित जाति कहा गया है। भारतीय जगननणा 2011 के अनुसार भारत की जनसंख्या में लगभग 16.6 प्रतिशत या 20.14 करोड़ आबादी दलितों की है। आज अधिकांश हिंदू दलित बौद्ध धर्म के तरफ आकर्षित हुए हैं और हो रहे है, क्योंकी बौद्ध बनने से हिंदू दलितों का विकास हुआ है।

कूटशब्द : दलित शब्द का शाब्दिक, जातियों की आंदोलनधर्मिता, दलितं मधुरं

प्रस्तावना
दलित शब्द का शाब्दिक अर्थ है। दलन किया हुआ। इसके तहत वह हर व्यक्ति आ जाता है जिसका शोषण उत्पीड़न हुआ है। रामचंद्र वर्मा ने अपने शब्दकोश में दलित का अर्थ लिखा है मसला हुआ, मर्दित, दबाया, रौंदा या कुचला हुआ, विनष्ट किया हुआ। पिछले छ:- सात दशकों में दलित पद का अर्थ काफी दबल गया है। डॉ. भीमराव अम्बेडकर के आंदोलन के बाद यह शब्द हिन्दू समाज व्यवस्था में सबसे निचले पायदान पर स्थित हजारों वर्षों से अस्पृश्य समझी जाने वाली तमाम जातियों के लिए सामूहिक रूप से प्रयोग होता है। अब दलित पद अस्पृश्य समझी जाने वाली तमाम जातियों के लिए सामूहिक रूप से प्रयोग होता है।

अब दलित पद अस्पृश्य समझी जाने वाली जातियों की आंदोलनधर्मिता का परिचायक बन गया है। भारतीय संविधान में इन जातियों को अनुसूचित जाति नाम से जाना जाता है। भारतीय समाज में वाल्मीकि या भंगी को सबसे नीची जाति समझा जाता रहा है और उसका पारंपरिक पेशा मानव मल की सफाई करना रहा है। परन्तु आज के समय में इस स्थिति में बहुत बदलाव आया है। दलित का अर्थ शंकराचार्य ने मधुराष्टकम् में द्वैव से लिया है। "दलितं मधुरं" कहकर श्रीकृष्ण को संबोधित किया है।

भारत में दलित आंदोलन की शुरूआत ज्योतिराव गोविंदराव फुले के नेतृत्व में हुई। ज्योतिबा जाति से माली थे और समाज के ऐसे तबके से संबंध रखते थे जिन्हें उच्च जाति के समान अधिकार नहीं प्राप्त थे। इसके बावजूद ज्योतिबा फूले ने हमेशा ही तथाकथित नीची जाति के लागों के अधिकारों की पैरवी की। भारतीय समाज में ज्योतिबा का सबसे दलितों की शिक्षा का प्रयास था। ज्योतिबा ही वो पहले शख्स थे जिन्होंने दलितों के अधिकारों के साथ-साथ दलितों की शिक्षा की भी पैरवी की।

इसके साथ ही ज्योति ने महिलाओं के शिक्षा के लिए सहारनीय कदम उठाए। भारतीय इतिहास में ज्योतिवा ही वो पहले शख्स थे जिन्होनें दलितों की शिक्षा के लिए न केवल विद्यालय की वकालत की बल्कि सबसे पहले दलित विद्यालय की भी स्थापना की। ज्योति में भारतीय समाज में दलितों को एक ऐसा पथ दिखाया था जिसपर आगे चलकर दलित समाज और अन्य समाज के लोगों ने चलकर दलितों के अधिकारों की कई लड़ाई लड़ी। यूं तो ज्योतिबा ने भारत में दलित आंदोलनों का सूत्रपात किया था लेकिन इसे समाज की मुख्यधारा से जोड़ने का काम बाबासेब भीमराव अम्बेडकर ने किया। एक बात और जिसका जिक्र किए बिना दलित आंदोलन की बात बेमानी होगी वो है बौद्ध धर्म। ईसा पूर्व 600 ईसवी में ही बौद्ध धर्म ने हिंदू समाज के निचले तबकों के अधिकारों के लिए आवाज उठाई।

भगवान गौतम बुद्ध ने इसके साथ ही बौद्ध धर्म के जरिए एक सामाजिक और राजनीतिक क्रांति लाने की भी पहल की। इसे राजनीतिक क्रांति कहना इसलिए जरूरी है क्योंकि उस समय सत्ता पर धर्म का अधिपत्य था और समाज की दिशा धर्म के द्वारा ही तय की जाती थी। ऐसे में समाज के निचले तबके को क्रांति की जो दशा भगवान बुद्ध ने दिखाई वो आज भी प्रासांगिक है। भारत में चार्वाक के बाद भगवान बुद्ध ही पहले ऐसे शख्से थे जिन्होंने ब्राह्मणवाद, जातीवाद और अंधविश्वास के लिखाफ न केवल आवाज उठाई बल्कि एक दर्शन भी दिया। जिससे कि समाज के लोग बौद्धिक दास्यता की जंजीरों से मुक्त हो सके।

यदि समाज के निचले तबकों के आदिकाल से इतिहास देखा जाए तो चार्वाक को नकारना भी संभव नहीं होगा। यद्यपि चार्वाक पर कई तरह के आरोप लगाए जाते हैं इसके बावजूद चार्वाक वो पहला शख्स था जिसने लोगों को भगवान के भय से मुक्त होना सिखाया। भारतीय दर्शन में चार्वाक ने ही बिना धर्म और ईश्वर के सुख की कल्पना की। इस तर्ज पर देखने पर चार्वाक भी दलितों की आवाज उठाता नजर आता है। जिस वक्त दलितों के अधिकारों को कानूनी जामा पहनाने के लिए भारत रत्न बाबा साहेब भीमराव अम्बेडकर ने लड़ाई शुरू कर दी थी। वक्त था जब हमारा देश भारत ब्रिटिश उपनिवेश की श्रेणी में आता था। लोगों के ये दासता का समय रहा हो लेकिन देलितों के लिए कई मायनों में स्वर्णकाल था। आधुनिकि भारत व दलित अधिकार आज दलितों को भारत में जो भी अधिकार मिले हैं उसकी पृष्ठभूमि इसी शासन की देन थी। यूरोप में हुए पुर्नजागरण और ज्ञानोदय आंदोलनों के बाद मानवीय मूल्यों का महिला मंडल हुआ। ये मानवीय मूल्य यूरोप की क्राति के आदर्श बने। इन आदर्शों की जरिए ही यूरोप में एक ऐसे समाज की रचना की गई जिसमें मानवीय मूल्यों को प्राथमिकता दी गई। ये अलग बात है कि औद्योगिकीकरण के चलते इन मूल्यों की जगह सबसे पहले पूंजी ने यूरोप में ली। लेकिन इसके बावजूद यूरोप में ही सबसे पहले मानवीय अधिकारों को कानूनी मान्यता दी गई। इसका सीधा असर भारत पर पड़ना लाजमी था और पड़ा भी। इसका सीधा सा असर हम भारत के संविधान में देख सकते हैं। भारतीय संविधान की प्रस्तावना से लेकर सभी अनुच्देछ इन्हीं मानवीय अधिकारों की रक्षा करते नजर आते हैं। भारत में दलितों की कानूनी लड़ाई लड़ने का जिम्मा सबसे सशक्त रूप में डॉ. अम्बेडकर ने उठाया। डॉ. अम्बेडकर दलित समाज के प्रणेता हैं। बाबा साहब अंबेडकर ने सबसे पहले देश में दलितों के लिए सामाजिक, राजनीतिक और आर्थिक अधिकारों की पैरवी की। साफ तौर पर भारतीय समाज के तात्कालिक स्वरूप का विरोध और समाज के सबसे पिछड़े और तिरस्कृत लोगों के अधिकारों की बात की। राजनीतिक और सामाजिक हर रूप में इसका विरोध स्वाभाविक था। यहाँ तक की महात्मा गांधी भी इन मांगों के विरोध में कूद पड़े। बाबा साहब ने मांग की दलितों को अलग प्रतिनिधित्व (पृथक निर्वाचिका) मिलना चाहिए यह दलित रानीति में आज तक की सबसे सशक्त और प्रबल मांग थी। देश की स्वतंत्रता का बीड़ा अपने कंधे पर मानने वाली कांग्रेस की सांसे भी इस मांग पर थम गई थी। कारण साफ था समाज के ताने बाने में लोगों का सीधा स्वार्थ निहित था और कोई भी इस ताने बाने में जरा सा भी बदलाव नहीं करना चाहता था। मात्मा गांधी जी को इसके विरोध की लाठी बनाया गया और बैठा दिया गया आमरण अनशन पर। अमरण अनशन वैसे ही देश के महात्मा के सबसे प्रबल हथियार था और वो इस हथियार को आये दिन अपनी बातों को मानने के लिए प्रयोग करते रहते थे। बाबा साहब किसी भी कीमत पर इस मांग से पीछे नहीं हटना चाहते थे वो जानते थे कि इस मांग से पीछे हटने का सीधा सा मलतब था दलितों के लिए उठाई गई सबसे महत्वपूर्ण मांग के खिलाफ में हामी भरना। लेकिन उन पर चारों और से दबाव पड़ने लगा। और अंततः पूना पैक्ट के नाम से एक समझौते में दलितों के अधिकारों की मांग को धर्म की दुहाई देकर समाप्त कर दिया गया। इन सबके बावजूद डॉ. अंबेडकर ने हार नहीं मानी और समाज के निचले तबकों को भारतीय संविधान में जगह दी गई। यहाँ तक कि संविधान के मौलिक अधिकारों के जरिए भी दलितों के अधिकारों की रक्षा करने की कोशिश की गई।

जब से डॉ. अम्बेडकर ने भारतीय क्षितिज में प्रवेश किया तभी से प्रत्येक वर्ष उनके लिए एक चुनौती के रूप में सिद्ध हुआ, और सन् 1930 तो फिर एक और बुड़ी चुनौती के रूप में आया। यह सत्याग्रह का युग था। गाँधी जी भारत की राजनीतिक आजादी के लिए अभियान चला रहे थे, जबकि डॉ. अम्बेडकर अछूतों की सामाजिक मुक्ति तथा राजनीतिक अधिकारों के लिए संघर्ष कर रहे थे। 2 मार्च सन् 1930 के दिन, डॉक्टर साहेब ने नासिक में अछूतों द्वारा प्रसिद्ध कालाराम मन्दिर में प्रवेश का अधिकार को पाने के लिए, 'मंदिर प्रवेश आन्दोलन' प्रारम्भ कर दिया। तब से कट्टर हिन्दुओं को वह मन्दिर पूरे एक वर्ष के लिए बन्द रखना पड़ा। परन्तु उस मन्दिर में प्रवेश का आन्दोलन अक्टूबर, सन् 1935 तक अविरल चलता रहा। हिन्दू कट्टरवाद तथा अनुदारवाद के लिए, यह शर्म की पराकाष्ठा थी। राष्ट्रीय आन्दोलन के दौरान जो गम्भीर राजनीतिक खेल चल रहा था उसके बीच डॉ. अम्बेडकर का अभियान मानवीय स्वतन्त्रता, मानवाधिकार की मूल समस्या को अपना प्रमुख आधार बनाये हुए था।

डॉ. अम्बेडकर के नेतृत्व में, जो अछूतों का आन्दोलन चल रहा था उसके बारे में यह कहना उचित होगा कि वह आन्दोलन अपने स्वरूप में व्यापक था। यह मात्र तालाबों में पानी पीने और मन्दिरों में प्रवेश के लिए ही आन्दोलन नहीं था, बल्कि अपनी अनेक गतिविधियों सहित इस प्रकार का अभियान राष्ट्रीय आन्दोलन के विकास का मार्ग प्रशस्त कर रहा था क्योंकि इसमें नागरिकता के सामान्य अधिकारों का प्रश्न अन्तर्निहित था। चाहे वह महाड का सत्याग्रह हो अथवा कालाराम मन्दिर में प्रवेश की समस्या, किसी संस्था की स्थापना हो अथवा मनु-स्मृति का अग्निदाह, सभी के साथ 'समान मानव अधिकारों की भावना जुड़ी हुई थी। इसी प्रक्रिया में, डॉ. अम्बेडकर ने दामोदर थैकर्स हॉल में, 22 मार्च सन् 1928 के दिन "समाज समता संघ" के सान्निध्य में अपने समक्ष पंडित पलाया शास्त्री द्वारा 'सामाजिक समता' को बढ़ाने हेतु, 500 महारों को जनेऊ धारण करवाया था। यह भी मानव अधिकारों का एक पक्ष था।

विश्व के प्रत्येक देश में ऐसे अनेकों लोग रहते हैं जो सामाजिक, आर्थिक, सांस्कृतिक तथा शैक्षिक आदि क्षेत्रों में अन्य लोगों के मुकाबले में पिछड़े हुए होते हैं और अन्य सशक्त वर्गों द्वारा शोषित होता हैं भारत में ऐसे लोगों को दलित कहा जाता है।

समाज का वह वर्ग जिसको समाज वर्गो द्वारा शोषित किया गया हो, जिनके अधिकार छीन लिए गए हैं, जिनको हीन समझा जाता है। ऐसा नहीं भारतीय स्वतन्त्रता - संग्राम में किसी एक जाति विशेष ने ही भाग लिया बल्कि सभी जातियों ने इसमें बढ़-चढ़कर भाग लिया है, चाहे वह किसी भी जाति से क्यों न हो। स्वतन्त्रता प्राप्ति के लिए अपना सब कुछ दाव पर लगा दिया। वह संघर्ष करने में पीछे नहीं हटे। उसके लिए उन्होंनें अपनेप्राणों तक को न्योछावर कर दिया।

डॉक्टर अम्बेडकर महार जाति से संबंधित थे और उनकी जाति को और उनको अछूत समझा जाता था। अम्बेडकर जी के साथ स्कूल में अछूतों जैसा व्यवहार किया जाता था, उन्हें कक्षा के अन्य छात्रों की तरह न उठने-बैठने दिया जाता था और न पूजा-अर्चना करने दी जाती थी। संस्कृत के शिक्षक ने उन्हें सस्कृत से मना कर दिया क्योंकि संस्कृत अध्यापक के अनुसार संस्कृत एक दैवीय भाषा है जिसे पढ़ने का अधिकार अछूतों व दलितों को नहीं है। इसलिए डॉक्टर अम्बेडकर ने न चाहते हुए भी संस्कृत के स्थान पर पारसी पढ़नी पड़ी। इन सभी अपमानों को सहते और सोचते हुए अम्बेडकर जी ने दलितों व अल्पसंख्यकों के लिए आरक्षण का प्रावधान करवाया जो आज भी हमारी सरकार द्वारा इस नियम की पालन किया जाता है। हरियाणा एक शांत प्रदेश के स्प में जाना जाता। परतु दलित उत्पीड़न के रूप में यह भी अछूता नहीं रह पाया। आज छोटी-छोटी बातों पर दबंग लोग दलितों को मरते पीटते हैं। उनको घर से बेघर करते हैं। वहाँ के दलितों को वहाँ से पलायन करना पड़ा। हरियाणा में दलित उत्पीड़न की बढ़ती वारदातों के पीछे गरीबी व अशिक्षा के साथ-साथ कुछ प्रतिशत दलितों का मान सम्मान से जीना और संविधान में दिए गए अधिकारों के सहारे अपने आर्थिक स्तर की उन्नति को भी माना गया है। 2010 में हिसार जिले के गाँव मिर्चपुर में सवर्णो ने दलित को कभी भी प्रगति करते हुए देखना नहीं चाहा। सवर्णों ने बस्ती में आगजनी की और पिता पुत्र को जिंदा जला दिया था। हिसार के दौलतपुर गाँव में दबंगों के उस हैरत अंगेज कारनामे को देखकर पूरी दुनिया सन्न रह गई थी। जिसमें उन्होंने खेत में रखे घड़े से पानी पीने के कारण एक दलित युवा मजदूर का हाथ काट डाला था।

भारतीय समाज में दलित की राजनीति में शुरूआत 1930 से होती है। जब डाक्टर अम्बेडकर ने दलित वर्गों के राजनीतिक अधिकारों का सवाल उठाया था। अस्पृष्यता व जातिय भेदभाव के खिलाफ सामाजिक आन्दोलनों की असफलताओं ने राजनीतिक आन्दोलन की आधारशिला रखी थी। राजनीति व साहित्य एक दूसरे को प्रभावित करते हैं। दलित राजनीति को सामाजिक न्याय की अवधारणा ने कुछ-न-कुछ योगदान दलित साहित्य को दिया है। राष्ट्रय स्तर की पत्र-पत्रिकाओं में उनकी

भागीदारी नगण्य है। यह स्थिति निश्चित रूप संतोषजनक नहीं है कि राष्ट्रीय स्तर की सभी पत्र-पत्रिकाओं का संपादन और प्रकाशन गैर-दलितों के हाथों में है।

भारत में पहली लोकसभा का चुनाव 1952 में हुआ था। उस समय दलित राजनीति कोई खास नहीं था। दलीतों और आदिवासियों में वोट की कीमत का अहसास नाममात्र ही था। हालांकि उस समय बाबा साहेब अम्बेडकर जी जीवित थे। फिर भी इस समाज में जागृति का बड़ा ही अभाव था। समय बीतने के साथ-साथ समाज में जाग्रति आती गई और दलित राजनीति का धीरे-धीरे आगे बढ़ना शुरू हुआ।

अल्पसंख्यक मामलों के मतंत्रालयों के लिए 2014 में प्रोफेसर अमिताभ कुडनु ने एक रिपोर्ट तैयार की थी। इसमें बताया गया था कि आज देश में एक तिहाई दलितों के पास जीवन की सबसे कम जरूरतों को पूरा करने वाली सुविधाएँ नहीं है। गांवों में 45 फीसदी दलित परिवारों के पास जमीन नहीं है और वह छोटी-मोटी मजदूरी कर गुजारा करते है। हालांकि सरकार ने साल 2016-17 में दलितों के उपर उठान के लिए 38.882 करोड़ रूपये का आवंटन किया है। यह आंकड़ा पिछले बजट में 30 हजार करोड़ था।

हमें सर्वे से पता चलता है कि दलित समाज के समक्ष अनेकों चुनौतियाँ है जिनका समाधान बहुत जरूरी हैं समाधान ऐसा हो तो सभी दलितों को सामाजिक, धार्मिक, राजनीतिक और सांस्कृतिक जैसे मुद्दों पर प्रकाश डाला जा सकता इनसे पहले शिक्षा संबंधित कितने दलितों को शिक्षा की सुविधाऐं दी जाती है या फिर नहीं दी जाती है। स्वतंत्रता के पश्चात भारतीय संविधान में दलितों की स्थिति को सुधारने हेतु अनेक कदम उठाये गये हैं। जिससे दलितों को आत्म सम्मान बल तो मिला है जो सदियों से चली आ रही मानसिक गुलामी की छाया में अपना अस्तित्व ही भूल गये थे। ऐसा करके ही हम सामाजिक परिवर्तन के अपने दायित्व को शिक्षा के माध्यम से पूरा कर सकेंगे जो समय की मांग भी है कि पब्लिक स्कूलों में अंग्रेजी माध्यम से पढ़ने वाले बच्चे अवर्णों में से कितने हैं और सवर्णों के कितने हुआ है। मौजूद हैं ? आजादी के इतने अंतराल के बाद भी भारत विकसित नहीं आज भी दलितों को वो मान-सम्मान नहीं मिला जो उनको मिलना चाहिए। जिनके वे पूरे हकदार हैं। अगर इस संप्रदाय की इस खाई को प्रेम-भाव व बंधुता से भर दे तो कोई भी इस समाज व देश में अपने आपको अछूत नहीं कहेगा और भारत देश एकात्मक अपना लेगा औरी देश प्रगति के मार्ग पर प्रशस्त हो सकेगा। अंत में कहा जा सकता है कि दलितों के साथ-साथ अन्य सभी जातियों को भी एक साथ जाति प्रथा का विरोध करना होगा तभी जाति प्रथा एवं जातिवाद को मिटाया जा सकता है अन्यथा नहीं।

संदर्भ

1. Mahendrakumar M Meshram. Atrocities against Dalits and Its prevention in India, Golden Research Thoughts. 2012;1(10):4.
2. Manoj Parashar. Ambedkar was a True Nationalist and Reformer, The Pioneer, Mumbai; c2012. p. 71-73.
3. Krishnan PS. Synthesising the Gandhi-Ambedkar-Narayanguru-Marx vision for Dalit Liberation, Social Change. 2011;41(1):1-39.
4. Chanchreek KL. Dr. B.R. Ambedkar (1891-1991): Fight for Rights of the Depressed Classes, HK Publishers, New Delhi. 1991;1:54-56
5. Rebati Ballav Tripathy. Dalits: A Sub Human Society published by Ashish Publication House, New Delhi; c1996. p. 112-115.
6. Kshirsagar RK. Dalit Movement in India and Its Leaders, MD Publications, New Delhi; c1994. p. 74-76A.